P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika
E: ISSN NO.: 2349-980X Vol-III* Issue-I*September-2015

भारतीय लोकतंत्र में सामाजिक न्याय एवं महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता

जितेन्द्र सिंह
व्याख्याता,
राजनीति विज्ञान विभाग,
एम. एस. जे. कॉलेज,
भरतपुर

सारांश

सामाजिक न्याय की अवधारणा लोकतांत्रिक राज्य की संकल्पना में ही निहित है। सामाजिक न्याय का मूलमंत्र है :– ऐसी सामाजिक व्यवस्था जिसमें प्रतिष्ठा, सम्मान, उत्पादन के साधनों, एवं लाभ कुछ लोगों के हाथ में न रह जाए बल्कि बिना किसी भेदभाव के हर व्यक्ति को समाज में समान अवसर एवं सुख–सुविधाएँ प्राप्त हो ।

लोकतांत्रिक व्यवस्था के वास्तविक सफल एवं सुचारू संचालन हेतु आवश्यक एवं महत्वपूर्ण है कि बिना भेदभाव के समान एवं सक्रिय भागीदारी हो तभी जाकर वास्तविक सामाजिक न्याय की स्थापना हो पायेगी। भारत में सदियों से समाज के एक महत्वपूर्ण वर्ग जिसे न्याय से वंचित रखा गया है वह है – महिला वर्ग। महिलाओं को मुख्य धारा से जोड़ने के संवैधानिक एवं वैधानिक प्रयास तो किये गये, परन्तु इन्हें पूर्ण रूप से प्राप्त तभी किया जा सकता है जब महिलाओं से सम्बन्धित समस्याओं के समाधान, हित एवं विकास सम्बन्धी नीतियों, निर्णयों एवं कानूनों क निर्माण एवं क्रियान्वयन उनकी आवश्यकताओं, आकांक्षाओं, सोच एवं दृष्टिकोण के अनुरूप हो। महिलाओं की राजनीति में भागीदारी से ही वास्तविक लोकतंत्र के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है ।

मुख्य शब्द : सामाजिक न्याय, स्वतन्त्रता, समानता, राजनीतिक सहभागिता, महिला सशक्तिकरण।

प्रस्तावना

सामाजिक न्याय की अवधारणा लोकतांत्रिक एवं लोककल्याणकारी राज्य की संकल्पना में ही स्वनिहीत है। सामाजिक न्याय का मूलमन्त्र है :– ऐसी सामाजिक व्यवस्था जिसमें प्रतिष्ठा, सम्मान, उत्पादन के साधनों, शक्ति, सत्ता एवं लाभ कुछ लोगों के हाथ में न रह जाए वरन् बिना किसी भेदभाव के हर व्यक्ति को समाज में समान अवसर एवं सुख–सुविधाएँ प्राप्त हो– विशेषकर निर्बल, निर्धन, शोषित, उत्पीड़ित एवं हाशिये पर रह रहे दीनहीन वंचित एवं कमजोर वर्ग तथा महिलाओं को उनमें समुचित अवसर मिले ताकि वे सामान्यतः सुखी, सम्मानित और गरिमामय जीवन जी सकें।

भारतीय राजनीति में सामाजिक न्याय की अवधारणा के बीज पुरातनकाल से परिलक्षित होते हैं, किन्तु वर्ण, जाति, वर्ग एवं लिंग के आधार पर असमानता एवं भेदभाव पूर्ण सामाजिक अन्याय एवं शोषण की स्थिति भारतीय समाज में कम या अधिक हमेशा रही है– खासकर महिलाओं के साथ । इस असमानता एवं भेदभाव को दूर करने के प्रयास के तहत भारत के संविधान की आत्मा प्रस्तावना में सामाजिक न्याय को महत्व देते हुए सभी नागरिकों के लिए सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक न्याय का लक्ष्य घोषित किया गया ।

लोकतांत्रिक व्यवस्था के वास्तविक सफल एवं सुचारू संचालन हेतु आवश्यक एवं महत्त्वपूर्ण है कि शासन में समस्त जनता की समान एवं सक्रिय भागीदारी हो तभी जाकर वास्तविक सामाजिक न्याय की स्थापना हो पायेगी। भारत में सदियों स समाज के एक महत्त्वपूर्ण वर्ग, जिसे न्याय से वंचित रखा गया है, वह है– महिला वर्ग। अतः भारतीय लोकतन्त्र में सामाजिक न्याय की अवधारणा की वास्तविक संकल्पना को महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता से ही प्राप्त किया जा सकता है ।

सामाजिक न्याय की अवधारणा का सैद्धान्तिक पक्ष

राजनीतिक चिन्तन में न्याय की संकल्पना पुरातन एवं महत्त्वपूर्ण है। परम्परागत दृष्टिकोण में जहाँ व्यक्ति के चरित्र पर आधारित न्याय पर बल दिया जाता था वहीं आधुनिक युग में समाज के पिछडे एवं वंचित वर्ग के उत्थान पर आधारित 'सामाजिक न्याय' को प्रधानता दी जाती है। सामाजिक न्याय का अर्थ है कि समाज के सभी व्यक्तियों को अपने जीवन अस्तित्व को बनाये रखने तथा

व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास के लिए 'अवसरों की समानता' प्राप्त हों। जहाँ व्यापक अर्थ में सामाजिक न्याय के अन्तर्गत सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक न्याय को शामिल किया जाता है, वहीं सीमित अर्थ में सामाजिक न्याय मनुष्य की गरिमा को बनाये रखना है। इस पकार सामाजिक न्याय एक सकरात्मक अवधारणा है जिसका उद्देश्य सभी को –समान अवसर' प्रदान कर भेदभावरहित समाज का निर्माण करना एवं समाज में पिछड वर्ग को ऊपर उठाकर उन्हें अधिकार सम्पन्न एवं विशेष सुरक्षा प्रदान करना है, जिसे स्वतन्त्रता, मानव व्यक्तित्व की गरिमा तथा मातृत्व आदि सामाजिक न्याय के मूल तत्वों द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है।

सैद्धान्तिक आधार पर भारत के संविधान की आत्मा प्रस्तावना में सामाजिक न्याय को महत्व देते हुए सभी नागरिकों के लिए सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक न्याय का लक्ष्य घोषित किया गया है। इसमें 'प्रतिष्ठा और अवसर की समानता' तथा 'व्यक्ति की गरिमा' को भी सुनिश्चित स्थान प्रदान किया गया है। सामाजिक न्याय को व्यवहारिक रूप प्रदान करने के लिए संविधान के अध्याय 3 में मौलिक अधिकार एवं अध्याय 4 में नीति–निर्देशक सिद्धान्तों का प्रावधान कर सामाजिक न्याय के प्रति वचनबद्धता व्यक्त की गई है। इसके अतिरिक्त सामाजिक–आर्थिक न्याय के लक्ष्यों की पूर्ति के लिए संविधान में लोक कल्याणकारी राज्य की परिकल्पना की गई है जो एक ओर लोगों के सामाजिक न्याय सुनिश्चित करने तथा दूसरी ओर इनके स्वास्थ्य, शिक्षा, रोजगार तथा आजीविका के लिए निर्वाह योग्य मजदूरी उपलब्ध कराने के लिए आवश्यक पहल करें तथा साथ ही समाज में कमजोर वर्गों विशेष रूप से महिलाओं के लिए सामाजिक सुरक्षा एवं कल्याण कार्यक्रमों को लागू करें।

राजनीतिक सहभागिता

राजनीतिक सहभागिता की अवधारणा सैद्धान्तिक अध्ययन की दृष्टि से 20 वीं शताब्दी की संकल्पना है, किन्तु इस अवधारणा के बीज राजनीतिक चिन्तन के आरम्भिक युग–युनानी चिन्तन में ही प्रस्फुटित हो चुके थे। राजनीतिक सहभागिता से अभिप्राय है– व्यक्ति की राजनीतिक क्षेत्र में की जाने वाली गतिविधि है तथा व्यवहार में– जिसका प्रभाव राजनीतिक समाज की व्यवस्था एवं प्रक्रिया पर पड़ता है। व्यक्ति की राजनीतिक क्रिया या व्यवहार प्रत्यक्ष व परोक्ष, कम या अधिक मात्रा में यदाकदा कुछ एक बार अथवा निरन्तर हो सकती है। सहभागिता सिर्फ अभिवृत्ति अथवा दृष्टिकोण मात्र नहीं होती है बल्कि इससे अधिक सहभागिता एक ऐसी गतिविधि है जिसका अनिवार्यतः राजनीतिक पक्ष होता है। राजनीतिक सहभागिता का अर्थ है– लोगों की उन राजनीतिक गतिविधियों में सक्रिय भागीदारी हो, जिनसे शासन की निर्णय प्रक्रिया प्रभावित होती है। नार्मन एच. पाई. नी. और सिडनी वर्बा ने अपने लेख, 'पोलिटिकल पार्टिसिपेशन' में राजनीतिक सहभागिता को आम लोगों की वे विधिसम्मत गतिविधियाँ माना है, जिनका उद्धेश्य राजनीतिक पदाधिकारियों के चयन और उनके द्वारा लिये जाने वाले निर्णयों को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करना होता है। इसके अतिरिक्त सिडनी वर्बा, श्लूजमेन ब्रेडी एवं नी के अनुसार राजनीतिक सहभागिता एक यन्त्र व्यवस्था के रूप में होती है, जो नागरिकों की आवश्यकताओं एवं प्राथमिकताओं को राजनीतिक निर्णय निर्माताओं तक पहुँचाती है तथा जिसके द्वारा उन पर प्रतिक्रिया करने के लिए दबाव डाला जाता है।

महिला राजनीतिक सहभागिता

महिला राजनीति सहभागिता, महिलाओं द्वारा स्वैच्छिक आधार पर राजनीतिक क्षेत्र में की जाने वाली गतिविधियाँ हैं, जिनसे निर्णय–निर्माण प्रक्रिया प्रभावित एवं निर्धारित होती हैं अर्थात महिला राजनीतिक सहभागिता का अर्थ सिर्फ वोट देने के अधिकार का प्रयोग ही नहीं है बल्कि सरकार के सभी स्तरों एवं दलीय व्यवस्था, दबाव समूहों में निर्णय–निर्माण, नीति–निर्माण एवं शक्ति के प्रयोग में भागीदारी भी है। महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता की अवधारणा उनके द्वारा निर्वाचन एवं प्रशासन में भागीदारी से व्यापक है। इसमें विधायकों से सम्पर्क, राजनीतिक विचारों का आदान–प्रदान, मतदाताओं के बीच अभिमत तथा अन्य सम्बन्धित गतिविधियाँ सम्मिलित हैं। राजनीतिक सहभागिता में शक्ति सम्बन्धों को प्रभावित एवं निरूपित करने वाली कोई भी संगठनात्मक गतिविधि शामिल होती है। महिला राजनीतिक सहभागिता में व्यापाक रूप में उन गतिविधियों को भी शामिल किया जाता है जिनके पास निर्णय की औपचारिक शक्ति नहीं होने पर भी, जिनके पास निर्णय शक्ति उनके व्यवहार एवं दृष्टिकोण को प्रभावित करते हैं। साथ ही महिला राजनीतिक सहभागिता में श्रम, दहेज, बलात्कार, घरेलू हिंसा, दबाव, खाद्य संवर्धन, वन संरक्षण आदि के लिए आन्दोलन, विरोध, समर्थन, धरना, बैठकें आदि गतिविधियों को भी शामिल किया जाता है। अतः राजनोति में सहभागी होकर ही महिलाएँ जो आज तक हाशिए पर रही स्वयं के साथ न्याय कर सामाजिक न्याय को सम्पुष्ट कर सकती है।

भारत में महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता : सामाजिक न्याय का व्यवहारिक स्वरूप

भारत में महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता के सन्दर्भ में ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर दृष्टिपात करें तो वैदिक युग में भारत में स्त्रियों की प्रस्थिति सभी क्षेत्रों में सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनीति में समानता पर आधारित थी। उत्तर वैदिक काल में भी स्त्रियों की प्रस्थिति अच्छी थी। उत्तर वैदिक युग के बाद सामाजिक संरचना में जटिलता, कठोरता, संकीर्णता, अपरादर्शी व्यवस्थाओं का उद्भव एवं स्त्रियों की स्वतन्त्रता का शनैः–शनैः हनन प्रारम्भ हुआ। 19 वीं सदी भारतीय समाज एवं राजनीति में अनेक अर्थों में विभाजक रेखा सिद्ध हुई। प्रत्यक्ष विदेशी वर्चस्व, अंग्रेजी भाषा एवं मिशनरियों के माध्यम से भारतीय समाज संरचना में बाहरी प्रभावों का सत्रपात एवं दखल से भारतीय परिवेश में स्त्री प्रस्थिति को भी प्रभावित किया।

बीसवीं सदी के प्रारम्भ स देश में महिला संगठनों के प्रयास प्रारम्भ हो गये थे। 1917 में महिलाओं का भारत संघ **(WIA)**, 1920 में भारतीय महिलाओं की राष्ट्रीय परिषद **(NCWI)**, 1920 में विश्वविद्यालयी महिलाओं का भारतीय संघ **(IFOW)** एवं सर्वमहत्त्वपूर्ण 1926 में अखिल भारतीय महिला सम्मेलन **(AIWC)** की ऐतिहासिक शुरूआत ने महिला मुद्दों को व्यापक राष्ट्रव्यापी स्वरूप

प्रदान किया। इनके अतिरिक्त इसी दशक में राष्ट्रीय एवं उदारवादी संघ **(NLA)** एवं महिला कोश संघ **(WFA)** की भूमिका महत्त्वपूर्ण थी। स्वतन्त्रता आन्दोलन में सामाजिक न्याय एवं लोकतन्त्र की वास्तविक स्थापना का अर्थ–स्त्री एवं पुरूष दोनों के लिए समान स्वतन्त्रता से था।

सर्वप्रथम 1917 में सरोजनी नायडू के नेतृत्व में भारतीय महिलाओं ने राजनीतिक में महिलाओं की सहभागिता का मुद्दा उठाया। 1935 के अधिनियम द्वारा शिक्षा एवं सम्पत्ति की योग्यता के आधार पर महिलाओं का मताधिकार दिया गया। फलस्वरूप 1937 में महिलाओं ने चुनाव के माध्यम से विधानमण्डलों में प्रवेश किया। बीसवीं सदी के तीसरे दशक से आरम्भ हुए महात्मा गांधी के नेतृत्व में असहयोग आन्दोलन, सविनय अवज्ञा तथा भारत छोड़ो आन्दोलन में भारतीय महिलाओं की भागीदारी ने महिलाओं की राजनीति में भूमिका के सन्दर्भ में नये आयाम प्रस्तुत किये। इससे न केवल उनकी अहिंसक आन्दोलन की क्षमताओं को उजागर किया वरन् नेतृत्व क्षमता में नये आयाम उभारे। भारतीय महिलाओं ने अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी सामाजिक न्याय से सम्बन्धित संगठनों म भागीदारी निभाई।

स्वाधीनता के पश्चात् 1950 में अंगीकृत एवं क्रियान्वित भारतीय संविधान में मौलिक अधिकार एवं नीति–निर्देशक के माध्यम से सभी नागरिकों को न्याय, स्वतन्त्रता, समानता एवं गरिमा की रक्षा के प्रावधान किये गये। भारतीय संविधान की प्रस्तावना में भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न, लोकतन्त्रात्मक धर्म निरपेक्ष, समाजवादी, गणराज्य बनाने तथा सब नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय के विचार रखने तथा प्रकट करने, विश्वास, धर्म और पूजा की स्वतन्त्रता, प्रतिष्ठा, अवसर की समानता प्राप्त करने तथा उन सब मे व्यक्ति का मान और राष्ट्र की एकता करने वाली बंधुता को बढ़ाने का संकल्प किया गया है। भारतीय संविधान में वर्णित मौलिक अधिकारों में धर्म, जाति, लिंग, जन्मस्थान या इनमें से किसी के आधार पर भेदभाव न करने और राज्य के अधीन समान अवसर उपलब्ध करने की व्यवस्था की गई है। इसी प्रकार नीति–निर्देशक तत्वों में भी समान कार्य के लिए समान वेतन महिलाओं के लिए विशेष सुविधाएँ जुटाने सम्बन्धी प्रावधान किये गये हैं। भारत सरकार द्वारा समय–समय पर अनेक नीतियों योजनाओं तथा कार्यक्रमों द्वारा महिलाओं को समानता का अधिकार प्रदान करने के प्रयास किये गये।

2001 में भारत सरकार की महिला सशक्तिकरण की नीति उल्लेखनीय कदम है। भारत सरकार ने छठी से लेकर ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में महिला हितों, विकास तथा सशक्तिकरण हेतु प्रयास किये हैं। सर्वाधिक क्रान्तिकारी कदम के रूप में 1992 मे 73वां एवं 74वां संविधान संशोधन अधिनियम रहा जिसमें स्थानीय स्वशासन में दो स्तरों ग्रामीण एवं नगरीय संस्थाओं में अध्यक्ष एवं सदस्य पदों पर महिलाओं के लिए एक तिहाई सीटों के आरक्षण की व्यवस्था की गई जा कि अब कई राज्यों में 50 प्रतिशत हो गई है। इसके अतिरिक्त संसद एवं राज्य विधानमण्डलों में भी पदों के आरक्षण सम्बन्धी विधेयक कई बार सदन में लाये गये, किन्तु किसी राजनीतिक कारण से विमर्श अथवा प्रतिरोध के फलस्वरूप अभी तक पारित नहीं हो पाया ।

संवैधानिक प्रावधानों, नीतियों एवं कानूनी सहायता से स्वतन्त्र भारत में महिलाएँ अनेक क्षेत्रों में सफलतापूर्वक महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर रही हैं, परन्तु उनकी राजनीति में भूमिका को आज तक भी निर्णायक नहीं माना जा सकता क्योंकि सक्रिय, प्रत्यक्ष व चुनावी राजनीति मुख्यतः पुरूष वर्चस्व एवं प्रभुत्व का क्षेत्र रहा है जहां महिलाओं की सहभागिता आनुपातिक रूप से हमेशा कम रही है। महिलाओं को न्याय प्रदान कर समाज की मुख्य धारा से जोड़ने के संवैधानिक एवं वैधानिक प्रयास तो किये गये परन्तु इन्हें पूर्ण रूप से प्राप्त तभी किया जा सकता है जब महिलाओं से सम्बन्धित समस्याओं के समाधान, हित एवं विकास सम्बन्धी नीतियों, निर्णयों एवं कानूनों के निर्माण एवं क्रियान्यन उनकी आवश्यकताओं, आकांक्षाओं, सोच एवं दृष्टिकोण के अनुरूप हो। अनुरूप एवं अनुकूल होने के लिए भी महिलाआ की राजनीति में भागीदारी आवश्यक एवं महत्त्वपूर्ण है। महिलाओं की राजनीति में भागीदारी से ही वास्तविक लोकतन्त्र के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. गाबा, ओमप्रकाश– राजनीतिक सिद्धान्त की रूपरेखा, मयूर पेपर बैक्स, नोयड़ा, 2004
2. पूरणमल– दलित संघर्ष और सामाजिक न्याय अविष्कार पब्लिशर्स, जयपुर 2002
3. वर्बा, नी एण्ड पाई – पोलिटिक्स एण्ड़ पोलिटिकल इक्वेलिटी कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस यू.के. 1978
4. वर्बा, एस. श्लूजमेन ब्रैडी, वाइस एण्ड़ इक्वेलिटी हावर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस केम्ब्रिज, 1995
5. कौशिक, आशा (स.) नारी सशक्तिकरण : विमर्श एवं यर्थाथ, पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर 2004
6. कौशिक, आशा (स.) नारी सशक्तिकरण : विमर्श एवं यर्थाथ, पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर 2004
7. बसु, डी.डी.– 'भारत का संविधान एक परिचय वाधवा एण्ड कम्पनी ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली 2002